रामानन्ददर्शन में तत्त्व चिन्तन

श्रीमती अंजना शर्मा

स्वामी रामानन्दाचार्य की रचनाओं का सर्वाधिक महत्त्व इसलिये है कि इन्होंने भक्तिरस को दार्शनिक स्वरूप प्रदान किया। मेलकोट के सम्राट विहिदेव अर्थात् विष्णुवर्धन को वैष्णव धर्म में दीक्षित करने के बाद वैष्णव सन्तों का विश्वास लेकर उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र और गीता के माध्यम से भक्तिरस की इन्होंने स्थापना की। श्रीरङ्गम् की गद्दी पर बैठने के उपरान्त इन्होंने कई मन्दिरों का निर्माण कराया तथा कई विशिष्ट एवं महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों को वैष्णव धर्म में दीक्षित कराया। इस सम्प्रदाय के अनुचिन्तन में इन्होंने श्रीभाष्य के अतिरिक्त गीताभाष्य, वेदान्तसार, वेदान्तदीप, गद्यत्रय और वेदार्थसंग्रह-जैसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों की रचना की। इनके विशिष्ट विवरण निम्नलिखित है -

(१) वेदान्तसार -

ब्रह्मसूत्र पर यह एक टीकाग्रन्थ है। संन्यास धारण के पश्चात् प्रशंसक जगत् ने इन्हें यतिराज की उपाधि से सम्मानित किया। इनका एक परम भक्त विद्वान् वैष्णव शिष्य था। उनका नाम 'कूरत्तालवार' था। उन्हें बोधायनवृत्ति कण्ठस्थ थी। इन्हीं की सहायता से इन्होंने 'वेदान्तसार' जैसे गम्भीर भाष्य की रचना की।

(२) वेदान्तदीप -

यह ग्रन्थ भी ब्रह्मसूत्र पर एक महत्त्वपूर्ण टीकाग्रन्थ ही है। इसमें लेखक ने यह बताने की चेष्टा की है कि किस प्रकार शाङ्करचार्य के अद्वैतवाद को दूर करके उन्हें भास्कर के सिद्धान्त और अपने पूर्वगामी गुरु यादवप्रकाश के सिद्धान्त से भी हट कर रहना पड़ा है। वे यहाँ भास्कर का भी साथ नहीं दे सके हैं, क्योकिं भास्कर की मान्यता थी कि ब्रह्म उन मर्यादाओं और सीमाओं से सम्बन्धित है, जिनसे जीव बन्धन में पड़ता है, क्योंकि उनकी मान्यता है कि ब्रह्म एक ओर शुद्ध है और दूसरी ओर स्वयं नाना रूप जगत् में परिणत है। इन दोनों मतों की उपनिषद् के पाठ से संगति नहीं बैठती है।

(३) श्रीभाष्य -

श्री भाष्य विश्वविख्यात ग्रन्थ बादरायण-ब्रह्मसूत्र पर टीकाग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में रामानन्द ने अपने विशिष्टाद्वैत मत का प्रतिपादन किया है। यह ग्रन्थ केवल भाष्य या टीकाग्रन्थ ही नहीं है, बल्कि वैष्णव दर्शन का यह एक प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है। ब्रह्मसूत्र के अपने इस भाष्य में रामानन्द ने लिखा

है कि बोधायन ने ब्रह्मसूत्र पर कोई वृहद् ग्रन्थ लिखा था, जिसे पूर्वाचार्यो ने अति संक्षिप्त रूप दिया है। आगे इन्होंने लिखा है कि बोधायन के सूत्र विवरण को बड़ी निकटता से अनुसरण किया है। सुदर्शनसूरि ने अपनी 'श्रुतिप्रकाशिका' में लिखा है कि रामानन्दभाष्य में प्रयुक्त पूर्वाचार्य शब्द की व्याख्या 'द्रविडभाष्यकारादयः' की गई है- न तु स्वोत्प्रक्षितमतान्तरेण सूत्राक्षराणि सूत्रपादानां प्रकृतिप्रत्ययविभागानुगुणं वदामः। न तु स्वोत्प्रोद्विक्षितार्थेषु सूत्राणि यथाकथञ्चित् द्योतयितव्यानि। इन उद्धरणों से ही हम इस निष्कर्ष पर आते हैं कि श्रीभाष्य दार्शनिक दृष्टि से भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं गौरवशाली एक वैष्णवग्रन्थ है।

(४) वेदार्थसंग्रह -

इस ग्रन्थ में वैष्णव धर्म और दर्शन की विशद् व्याख्या श्रुतिस्मृति और उपनिषदों की परम्परा के अनुार की गई है। रामानन्द ने वेदार्थसंग्रह के पृष्ठ 128 में वाक्यकार की निम्नलिखित पंक्ति को उद्धृत किया है- युक्तं तद् सगुणोपासनात् और द्रविड़ाचार्य की यह टिप्पणी भी दर्शनीय है- यद्यपि सगिात्तो न सगुणैव देवता प्राप्यत इति। यहाँ कहने का तात्पर्य या मुख्य विचार यह है कि ईश्वर के निर्गुण रूप में भक्ति की दृष्टि से भी देखा जाय तो भी पूर्ण मुक्ति सगुण रूप की अनुभति से ही होती है कि किसी कारणवश इसमें तात्त्विक विश्लेषण पद्धति को विस्तृत रूप से नही अपनाया गया, फिर भी उत्तरकालीन तात्त्विक विचारों के विकास का यही प्रमुख स्त्रोत रहा है।

रामानन्द साहित्य

रामानन्दाचार्य के ग्रन्थों पर टीका लिखने वालों में अथवा रामानन्द-साहित्य को समृद्ध बनाने में कतिपय स्वनामधन्य वैष्णवाचार्यों की कृतियाँ उगेखनीय हैं। इनमें प्राथमिकता की दृष्टि से सुदर्शन सूरि (1200 से 1275) का नाम समादरणीय है। इन्होंने श्रीभाष्य पर श्रुतिप्रकाशिका नामक टीका लिखी है। श्रुतिदीपिका, उपनिषद् व्याख्या प्रभृति भी इन्हीं की रचनाएँ हैं। वेदार्थसंग्रह की टीका और तात्पर्यदीपिका आदि ग्रन्थों की रचना भी इन्हीं की है। वेंकटनाथ या वेदान्तदेशिक रामानुज सम्प्रदाय के महान् दार्शनिक थे। श्रीभाष्य पर इन्होंने तत्त्वटीका नामक व्याख्या लिखी है। इन्होंने ही न्यायसिद्धान्त तथा शतदूषणी अर्थात् अद्वैत-खण्डनपरक ग्रन्थों की रचना की है। मेघनादारि और नयद्युमणि की रचना भी इन्होंने ही की है। इनके अतिरिक्त श्रीराममिश्र देशिक ने श्रीभाष्यवृत्ति लिखी है। वात्सयवरद ने तत्त्वसार नामक दार्शनिक ग्रन्थ का प्रणयन किया है। वेदान्तदेशिक की तत्त्वटीका ने वैष्णव सम्प्रदाय के सिद्धान्तों को सम्पुष्ट किया है। वीर राघवदास की तात्पर्य टीका ने वैष्णव सम्प्रदाय की अनेक समस्याओं का गम्भीर विश्लेषण प्रस्तुत किया है। मेघनादारि नयप्रकाशिका या नयद्युमणि के लेखक है। लोकाचार्य ने तत्त्वत्रय

की रचना की है। श्रीनिवास ने यतीन्द्रमतदीपिका लिख कर रामानुज-साहित्य को पर्याप्त समृद्ध बनाया है।

श्रीरामानन्दाचार्य के देहावसान के लगभग डेढ़-दो सौ साल पश्चात् श्रीसम्प्रदाय दो खण्ड़ों में विभक्त हो गया। फलतः श्रीसम्प्रदाय दो मतों में विभक्त हो गया। इन दो सम्प्रदायों का नाम बडगलै और टैंगलै है। वडगलै मत के मुख्य प्रतिनिधि वेंकटनाथ है और टैंगलै मत के प्रतिनिधि लोकाचार्य हैं। वडगलै मत के आचार्य उभय वेदान्ती थे, क्योंकि इनकी दृष्टि में संस्कृत और तमिल वेद दोनों समान महत्त्वपूर्ण थे, किन्तु टैंगलै मत के अनुसार तमिलप्रबन्धम् मुख्य है। संस्कृत वेद के प्रति वह उदासीन हैं। वडगलै के मतानुसार ईश्वरीय कृपा या अनुग्रह के लिए साधक को कर्म और उपासना द्वारा चित्तशुद्धि और चित्त की एकाग्रता के लिए प्रयत्न करना पड़ता है। यह 'मार्जारकिशोर' न्याय को मानता है, जिसके अनुसार कपिकिशोर को अपनी माता की छाती से कस कर चिपकना पड़ता है, जिससे वह गिर न जाय। दूसरे टैंगलै मत के अनुसार साधक को ईश्वर की अनुकम्पा के लिए किसी प्रयत्न की आवश्यकता नहीं है। यह 'मार्जारकिशोर' न्याय को मानता है। जैसे बिगी स्वयं अपने बगो को अपने मुँह से पकड़ कर निरापद स्थान पर ले जाती है, उसी प्रकार ईश्वर अपने भक्त की रक्षा स्वयं करते हैं। उनकी प्राप्ति के लिए किसी प्रयास की आवश्यकता अपेक्षित नहीं है। 'वडगलै' मत के संस्थापक वेंकटनाथ अर्थात् वेदान्तदेशिक रामानन्द सम्प्रदाय के सर्वाधिक प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति हुए। इनकी अनेक रचनाएँ हैं। इनमें निम्नलिखित रचनाएँ महत्त्वपूर्ण हैं - संकल्पसूर्योदय, हंसदूत, रामाभ्युदय, यादवाभ्युदय, श्रीभाष्य पर तत्त्वटीका, अधिकरणसारावली, तत्त्वमुक्ताकलाप, गीतार्थतात्पर्यचन्द्रिका, ईशावास्यभाष्य, शतदूषणी, न्यायपरिशुद्धि प्रभृति। ऐसे अनेक विद्वानों ने इस साहित्य को पर्याप्त समृद्ध किया है।

रामानन्द का विशिष्टाद्वैतवाद

वैष्णव दर्शन के अनुसार आचार्य रामानन्द ने शंकराचार्य के अद्वैत वेदान्त के विरोध में स्वतन्त्र दार्शनिक मत की स्थापना की, जो 'विशिष्टाद्वैत' के नाम से जानी जाती है स्वामी रामानन्द के अनुसार अद्वैतरहित द्वैत और द्वैतशून्य अद्वैत - दोनों मात्र कल्पना हैं, धरातलरहित है, क्योंकि भेद के विना अभेद और अभेद के विना भेद सिद्ध नहीं होते हैं। अतः दोनों सदा साथ रहते हैं। इनमें पार्थक्य की सम्भावना नहीं है। तत्त्व सदा द्वैतविशिष्ट अद्वैत होता है। इसी का संक्षिप्त रूप विशिष्टद्वैत है। द्वैत विशेषण है और अद्वैत विशेष्य है और विशेषणयुक्त विशेष्य को विशिष्ट कहते है।

रामानन्दाचार्य के अनुसार चित्, अचित् और ईश्वर - ये तीन तत्त्व हैं। इनमें चित् जीव है और

अचित् जगत् है। ये दोनों ईश्वर के विशेषण हैं और ईश्वर विशेष्य है। अतः चित् और अचित् विशेषणों से विशिष्ट अद्वितीय एकत्व ब्रह्म अर्थात् परमात्मा का प्रतिपादन करने के कारण इस मत को 'विशिष्टाद्वैत' कहा गया है - चिदचिद्विशिष्टाद्वैतमेकमेव ब्रह्म इति (यतीन्द्रमतदीपिका)

विशिष्ट अद्वैत अथवा अद्वितीय है। भेद या द्वैत उसके विशेषण है, उसके अंग है विशेष अङ्गी है। विशेषणविशिष्ट विशेष्य ही 'विशिष्ट' है। यही अद्वैत है। यह सदा ही द्वैत से विशिष्ट रहता है। यहाँ द्वैत और अद्वैत में अपृथक् सिद्धि सम्बन्ध है। ये एक-दूसरे से अलग नहीं किये जा सकते हैं। रामानन्द ने द्वैत और अद्वैत दोनों को सत्य और सहधर्मी माना है, फिर भी वे दोनों को समस्तरीय नहीं मानते है, उनकी दृष्टि में अद्वैत मुख्य है और द्वैत गौण है। अद्वैत अङ्गी है। यह द्रव्य है, आत्मरूप है। द्वैत विशेषण है और अद्वैत विशेष्य है। अतः द्वैत सर्वथा अद्वैत पर आश्रित है। द्वैत अद्वैत का विशेषण बन कर ही उससे अपृथक् रहता है। यही विशिष्टाद्वैत है। यह द्वैताऽद्वैत से भिन्न है। इसमें द्वैत और अद्वैत दोनों समान रूप से सत्य है, समस्तरीय है।

आचार्य शङ्कर ने 'तत्त्वमसि' इस महावाक्य का अर्थ किया है- तत् अर्थात् ब्रह्म, त्वम् अर्थात् आत्मा, असि अर्थात् हो। अर्थात् आत्मा और ब्रह्म की अभिन्नता ही 'तत्त्वमसि' है। शङ्कर के अद्वैतवाद के अनुसार आत्मा और ब्रह्म में अभेद सम्बन्ध है। तात्पर्य यह कि दोनों एक अद्वैतरूप हैं। इस तरह शङ्कर ने जीव और ब्रह्म की एकता का प्रतिपादन कर एकमात्र निर्विशेष, निर्गुण, ब्रह्म को परम-तत्त्व के रूप में स्वीकार किया है किसी अन्य तत्त्व के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करने के कारण इनके मत को अद्वैतवाद के नाम से ख्याति मिली है। रामानन्दाचार्य ने 'तत्त्वमसि' महावाक्य का अर्थ इस प्रकार किया है- 'तत्' पद का अर्थ सर्वज्ञत्व, सत्यसंकल्पत्वम् और जगत्कारणत्वविशिष्ट ब्रह्म है। इसी तरह 'त्वम्' पद का अर्थ अचिद्विशिष्ट जीव अर्थात् शरीरात्मक ब्रह्म है। वस्तुतः दोनों ब्रह्म एक हैं। केवल विशेषणों का अन्तर है। एक प्रकार के विशेषणों से विशिष्ट ब्रह्म अर्थात् ईश्वर तथा दूसरे प्रकार के विशेषणों से विशिष्ट ब्रह्म अर्थात् ईश्वर से अाभिन्न है। अतः इससे भी विशिष्ट ईश्वर की एकता सिद्ध होती है। इसीलिए रामानन्द के मत को विशिष्टाद्वैत कहते हैं। रामानन्द ब्रह्म को विशेष्य तथा जीव और जगत् को विशेषण मानते हैं। ब्रह्मसूत्र पर श्रीभाष्य का यह कथन द्रष्टव्य हैं-

तत्पदं हि सर्वज्ञं सत्यसङ्कल्पं जगत्कारणं ब्रह्म परामृशति, तदैक्षत बहु स्याम (छान्दोग्योपनिषद् - 5.2.3) इत्यादिषु तस्यैव प्रकृतत्वात्। तत् समानाधिकरणं त्वं पदं च अचिद्विशिष्टं जीवशरीरकं ब्रह्म प्रतिपादयति। प्रकारद्वयावस्थितैकवस्तुपरत्वात् सामानाधिकरणस्य (ब्रह्मसूत्र श्रीभाष्य- 80)।

रामानन्द ने ब्रह्म, जीव और जगत् तीनों की यथार्थ एवं भिन्न-भिन्न सत्ताएँ स्वीकार की हैं। उनके

मत में ब्रह्म को जीव और जगत् को आत्मस्वरूप माना गया है। उन्होंने जीव और जगत् अर्थात् चित् और अचत् को ब्रह्म के अधीन एवं उसके विशेषण के रूप में स्वीकार किया है। उनके मत में किसी भी वस्तु का ज्ञान विना विशेषण के नहीं होता है। इसीलिए इस मत को विशिष्टाद्वैत कहा गया है –

वस्त्वन्तरविशिष्टस्यैव अद्वितीयत्वं श्रुत्यभिप्रायः। सूक्ष्मचिदचिद्विशिष्टस्य ब्रह्मणः तदानीं सिद्धत्वात् विशिष्टस्यैव अद्वितीयत्वम् सिद्धमिति (वेदान्ततत्त्वसार)।

निदेशक

पद्मश्री नारायणदास रामानन्द दर्शन, शोध केन्द्र, जयपुर